International Journal of Applied Research 2018; 4(1): 554-558

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(1): 554-558
www.allresearchjournal.com
Received: 22-11-2017
Accepted: 24-12-2017

अनामिका कुमारी
शोधार्थी, स्नातकोत्तर
राजनीतिशास्त्र विभाग, बी. एन. मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
अनामिका कुमारी
शोधार्थी, स्नातकोत्तर
राजनीतिशास्त्र विभाग, बी.एन. मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार, भारत

स्वतंत्रता पूर्व एवं स्वतंत्रता के पश्चात महिला नेतृत्व विकास में पंचायती राज की भूमिका

अनामिका कुमारी

सारांश
महिला नेतृत्व विकास एक ऐसी मौन क्रांति का द्योतक है जो अभी राष्ट्रीय स्तर पर सार्वजनिक रूप से भले ही दिखाई नहीं दे रही हो पर उसकी धीमी आँच भारतीय लोकतंत्र को अवष्य मजबूत बना रही है। यह क्रांति देश के सत्ता–विमर्श के ढाँचे में ही बदलाव नहीं ला रही है बल्कि पंचायत स्तर पर इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं की भागीदारी ने स्थानीय स्तर पर सामुदायिक जीवन और उसकी चेतना तथा संस्कृति में भी परिवर्तन लाया है। इन निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों ने सत्ता के जातीय समीकरण को ही नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक समीकरण को भी बदला है। ग्राम सभा से लेकर संसद तक राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं की भागीदारी दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। अब स्थिति यह है कि पंचायतों में भागीदारी होने के साथ ही उनकी आत्मनिर्भरता भी बढ़ी है। उनमें जागरूकता भी आयी है और वे छोटे–छोटे स्वयं सहायता समूहों के जरिये अपना स्वरोजगार अपना रही हैं और देश के राष्ट्रीय विकास में अपना सहयोग भी दे रही हैं। इस तरह यह कहना गलत नहीं होगा कि पंचायतों से ही महिलाओं के राजनीतिक एवं सशक्तीकरण अभियान को गति मिली है। जब पंचायतों में उनकी भागीदारी बढ़ी तभी वे हर दिशा में आगे निकल पायी हैं।

प्रस्तावना
स्वतन्त्रता आंदोलन का एक मात्र उद्देश्य दासता की बेड़ियों को उतार फेंकना ही नहीं था अपितु स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए किये गये इस संघर्ष में यह दृढ़ विश्वास अन्तर्निहित था कि राजनीतिक रूप से स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ–साथ जनता की सामाजिक आर्थिक स्वतन्त्रता के बेहतर प्रयास किये जायेंगे। स्वतन्त्रता के इस पावन अवसर पर संविधान सभा के समक्ष भाषण देते हुए पं0 जवाहर लाल नेहरू ने कहा था :–''वर्षों पूर्व हमने नियति के साथ एक प्रतिज्ञा की थी और वह समय आ गया है जबकि हम उस प्रतिज्ञा को सर्वांष में तो नहीं लेकिन अधिकांश में पूरा करेंगे। ठीक आधी रात के समय जबकि सारा संसार निद्रामय है, भारत के जीवन तथा स्वतन्त्रता का स्वर्णविहान होगा। इतिहास में कभी कभार ही वह क्षण आता है, जब हम पुरातन युग से नूतन युग में प्रवेश करते हैं, जब एक युग का अन्त हो जाता है और जब दीर्घकाल से सोई हुई राष्ट्र की आत्मा जग उठती है। यह उचित ही है कि इस गम्भीर अवसर पर प्रतिज्ञा करें कि हम भारत की, उसके नागरिकों की और इससे भी अधिक मानवता की सेवा करेंगे।''
इस प्रकार 15 अगस्त. 1947 को भारतीय इतिहास में नवीन युग का सूत्रपात हुआ। लगभग 200 वर्षों की दासता की विमुक्ति के बाद भारतीय जनमानस ने स्वतन्त्रता एक अनिर्वचनीय प्रसन्नता में राहत की सांस ली। 26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान निर्माताओं द्वारा जिस जनतांत्रिक प्रणाली की नींव रखी गयी उससे भारतीय जनता की आषाओं व अपेक्षाओं में निरन्तर प्रगति महसूस की गयी। दूसरी तरफ कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के उत्तरोत्तर विकास के चलते शषन भी शीघ्रातिशीघ्र जनता की आशाओं व अपेक्षाओं पर खरा उतरना चाहता था जिससे जनता को भी यह महसूस हो सके कि भारत में सही अर्थों में जनता का शषन मौजूद है। देश का कोई भी नागरिक ऊपर से लेकर नीचे तक किसी भी राजनीतिक प्रणाली में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकता है। इसे स्पष्ट करते हुए पं0 नेहरू ने संविधान सभा के समक्ष कहा था कि :– ''इस संविधान सभा का सर्वप्रथम कार्य भारत को नये संविधान के माध्यम से स्वतन्त्रता प्रदान करना, भूख से पीड़ित लोगों को भोजन देना, वस्त्रहीन लोगों को वस्त्र देना तथा प्रत्येक भारतीय को उसकी क्षमता के अनुसार उन्नति करने हेतु अधिक से अधिक अवसर प्रदान करना है। इस समय भारत का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि गरीब और भूख से पीड़ित लोगों की समस्या को कैसे हल किया जाय। हम जहाँ कहीं भी जाते हैं हमें इस समस्या का सामना करना पड़ता है। यदि हम इस समस्या को शीघ्र हल नहीं कर सके तो हमारा कागजी संविधान अनुपयोगी और निरर्थक हो जायेगा।''

जब हम अपने अतीत पर नजर डालते हैं तो पाते हैं कि भारत में गार्गी और मैत्रेयी जैसी प्रसिद्ध महिला दार्षनिक थीं जो पुरूषों के स्तर पर ही भाषण–प्रवचन तथा बहस–मुवाहिसों में हिस्सा लिया करती थीं। हमारे स्वाधीनता आंदोलन में भी महिलाओं का योगदान पुरूषों से थोड़ा भी कम नहीं था। स्वाधीनता आंदोलन से जुड़ने के महात्मा गाँधी के आह्वान पर ऐसे समय में महिलाओं ने उसमें हिस्सा लिया जब सिर्फ 2.0 प्रतिषत महिलाएँ ही शिक्षित थीं। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि महिलाओं के लिए घर से बाहर निकलना कितना कठिन था, परन्तु तब भी वे बाहर निकलीं। आजादी के बाद भी संविधान सभा के सदस्य के रूप में महिलाओं ने स्वतन्त्र भारत के लिये संविधान का मसौदा तैयार करने के काम में हिस्सा लिया। यह गर्व की बात है कि डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के प्रस्ताव पर संविधान ने शुरू से ही महिलाओं को वोट देने का अधिकार दिया, जिससे ऐसी व्यवस्था वाले चुनिंदा देशों की श्रेणी में भारत भी शामिल हो गया। इसके अलावा एक लंबी लड़ाई के बाद 73वें संविधान संषोधन के माध्यम से स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं में उनकी भागीदारी सुनिष्चित करने के उद्देश्य से उन्हें एक तिहाई आरक्षण की भी व्यवस्था (वर्तमान में कुछ राज्यों में 50 प्रतिषत) कर दी गयी, किन्तु इन सबके बावजूद क्या सही अर्थों में पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व सुनिष्चित हो पाया है ?

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के लिए यह आवष्यक है कि लोकतंत्र को एक व्यापक भागीदारी वाली प्रक्रिया के रूप में देखा जाय, जिसमें ग्रासरूट स्तर पर आम आदमी व नागरिक खुद अपने, समुदाय और अपने काम को प्रभावित करने वाले फैसलों में सीधे भाग लें। यह स्थानीय स्तर पर नागरिकों के सशक्तिकरण और सेवाओं के वितरण में उनकी भागीदारी चाहता है। ज्यांद्रेज और अमर्त्य सेन मानते हैं कि स्थानीय लोकतंत्र के अभ्यास को भी, जो व्यापक राजनीतिक शिक्षा का रूप है, गाँव की राजनीति के संदर्भ में लोग संगठित होना, अपने अधिकारों की माँग करना, भ्रष्टाचार का विरोध करना और सबसे बढ़कर शासन में स्थानीय स्तर पर निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया के संदर्भ में भागीदारी सुनिश्चित होती है। सीखने की यह प्रक्रिया न केवल स्थानीय स्तर पर लोकतंत्र को सशक्त बताता है बल्कि सामान्य राजनीतिक भागीदारी के लिए उनकी तैयारियों को भी बढ़ाता है। आम आदमी ही लोकतंत्र की जड़ है तथा उनकी भागीदारी सरकार को बैधता प्रदान करती है। उसमें भी महिलाओं की भागीदारी लोकतंत्र को और अधिक समावेशी बनाती है, क्योंकि जब तक दुनिया की आधी आबादी को शासन तथा निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में ज्यादा से ज्यादा भागीदार नहीं बनाया जायेगा महिलाओं की स्थिति नहीं बदली जा सकेगी। हालाँकि नागरिक के रूप में अपने स्वयं के हितों और अधिकारों को पाने के लिए महिलाओं द्वारा अनौपचारिक राजनीतिक गतिविधियों की तेजी से वृद्धि होना स्वीकारता है, किन्तु औपचारिक राजनीतिक ढाँचे में उनकी भूमिका लगभग अपरिवर्तित बनी हुई है। महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण के मुद्दे ने 1995 में बीजिंग में आयोजित महिलाओं पर चौथे विश्व सम्मेलन के समय महिलाओं के अधिकारों के लिए वैश्विक बहस में रफ्तार पकड़ी है। पुरूषवादी मानसिकता के शिकार लोग अक्सर यह तर्क देते हैं कि निरक्षर महिलायें पंचायतों का कामकाज ठीक ढंग से नहीं समझ सकती है लेकिन सर्वेक्षणों के निष्कर्ष इसके उलट हैं। पिछले 20–22 वर्षों से भारत में पंचायतों के माध्यम से सशक्तीकरण का जो दौर प्रारम्भ हुआ है, उसमें महिलाओं की शासन में हिस्सेदारी एक व्यापक अर्थ रखती है, इसे मात्र वोट देने या प्रषासनिक प्रक्रिया का एक हिस्सा होने के अधिकार तक ही सीमित नहीं किया जा सकता, जब तक कि शासन में निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया तक उन्हें पहुँचने का अवसर न मिले। दिलचस्प बात यह है कि एक तरफ जहाँ लोक सभा और विधान सभाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का मामला कई वर्षों से लंबित पड़ा है, दूसरी तरफ पंचायतों में महिलाओं को मिले एक तिहाई आरक्षण से जमीनी स्तर पर काफी बदलाव आये हैं और एक नयी राजनीतिक संस्कृति भी विकसित हुई है। राजनीतिक भागीदारी न केवल महिलाओं के हितों को बढ़ावा देने वाले महिलाओं के विकास का प्रतीक है बल्कि यह क्षेत्र का एक हिस्सा होने के लिए अन्य महिलाओं को जागरूक बनाता है और संगठित करता है। आज भारत में 12 लाख से अधिक महिला निर्वाचित प्रतिनिधि हैं जो दुनिया के किसी देश में नहीं हैं। इतना ही नहीं अगर पूरी दुनिया के निर्वाचित महिला प्रतिनितियों की संख्या जोड़ी जाय तो भी वह संख्या इन भारतीय निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों से कम ही है। इस तरह भारत में लोकतंत्र की मजबूती के लिए एक ऐसी मौन लोकतांत्रिक क्रांति हो रही है जो अभी राष्ट्रीय स्तर पर सार्वजनिक रूप से भले ही दिखाई नहीं दे रही है पर उसकी धीमी आँच भारतीय लोकतंत्र को मजबूत बना रही है। देश में सत्ता–विमर्श के ढाँचे में भी बदलाव ला रहीं हैं। पंचायत स्तर पर इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं की भागीदारी ने स्थानीय स्तर पर सामुदायिक जीवन और उसकी चेतना तथा संस्कृति में भी परिवर्तन लाया है।

परिकल्पना

शोध–पत्र में इस परिकल्पना को लेकर अध्ययन किया गया है कि नवीन पंचायती राज व्यवस्था के अंतर्गत महिलाओं को आरक्षण के माध्यम से मिले राजनीतिक अवसर का सामाजिक एवं राजनीतिक विकास पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। महिलाओं का सशक्तीकरण अधिक प्रभावी रुप में हो सकता है। साथ ही इन परिकल्पनात्मक तथ्यों की जांच की गयी कि रू. 1. पंचायती राज व्यवस्था सामाजिक विकास के साथ–साथ महिला उत्थान का सशक्त माध्यम हैं, 2. महिलाएँ देश की आधी आबादी हैं और वे एक जनप्रतिनिधि की भूमिका को पुरुषों के सामान ही निभा सकती हैं, 3. सामाजिक रुप से पिछड़ी तथा घर की चारदीवारी में बंद महिलाओं को राजनीतिक कौशल प्राप्त करने में समय लगेगा, 4. ग्रामीण परिवेश में पुरुष प्रभुत्व आज भी महिलाओं की राजनैतिक सशक्तीकरण व सहभागिता को स्वीकार नहीं कर पाया है, 5. ग्रामीण महिलाओं के सामने कुछ सामाजिक, आर्थिक व मनोवैज्ञानिक समस्याएं व बाधाएं हैं, जो उन्हें स्वतंत्र रुप से बिना किसी हस्तक्षेप के कार्य करने से रोकती हैं।

लक्ष्य व उद्देश्य

प्रस्तुत शोध.पत्र का उद्देश्य देश की पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से महिला नेतृत्व विकास का अध्ययन करना है। ग्रामीण स्तर पर महिलाओं की स्वतंत्रता, राजनीति में उनकी भागीदारी तथा समाज में उनके आगे आने अथवा पुरुषों में उनकी समानता आदि प्रश्नों के बारे में जब हम सोचते हैं तो समाज में महिलाओं की एक दयनीय स्थिति उभरकर सामने आती है। महिला सशक्तीकरण के इतने प्रयास महिलाओं की आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्थिति को बनाते हैं परन्तु राजनीति का क्षेत्र लम्बे समय से पुरुषों का रहा है तथा राजनीति में महिलाओं की भागीदारी नाममात्र की रही है, इसलिए उनका सशक्तीकरण ही इस शोध आलेख का प्रमुख उद्देश्य है। ग्रामीण क्षेत्रों में सत्ता का स्वरुप सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक पृष्ठभूमि में तीन प्रकार के पंचायत पदाधिकारियों के रुप में व्यक्त किया जा सकता है– सरपंच, नायब सरपंच और वार्ड मेम्बर।

सत्ता के स्वरुप में अपनी स्थिति के कारण ये सभी निर्णय प्रक्रिया पर असर डालते हैं। पंचायती राज संस्थाओं के इन लोकप्रिय प्रतिनिधियों का व्यवहार ही पंचायतों के निर्णय को प्रभावित करता है इसलिए इनकी राजनैतिक पृष्ठभूमि, राजनैतिक महत्वाकांक्षा, स्वयंसेवी संगठनों में भागीदारी, संबंधित पंचायतों की समस्याओं की समझ, ग्रामीणों से सम्पर्क और राजनीतिक निष्ठा के बारे में

विस्तृत विचार–विमर्श से आ रहे बदलावों पर महत्वपूर्ण प्रकाष पड़ेगा।

स्वतन्त्रता पूर्व भारतीय राजनीति में महिलाएँ

भारतीय महिलायें आजादी के पूर्व से राजनीति के साथ किसी न किसी रूप में संबद्ध रहीं हैं। वह स्वयंसेवक और नेता दोनों के रूप में स्वतन्त्रता आंदोलन का हिस्सा थीं। सामाजिक और धार्मिक सुधार और महिलाओं की शिक्षा इस विकास में महत्वपूर्ण कारक थे। भारत में महिलाओं का सामाजिक, राजनीतिक परिवर्तन के लिए पहला आंदोलन 20वीं शताब्दी के आरम्भ में हुआ, जब महिलायें भी पुरूषों के साथ स्वतंत्रता आंदोलन में सम्मिलित हुईं। इस परिदृष्य को कौन भूल सकता है जब बड़ी संख्या में साड़ी पहनकर महिलायें स्वतंत्रता आंदोलन में पुरूषों के साथ कार्य कर रहीं थीं, वे डंडे से नियंत्रण करने वाले सिपाहियों और जेल की सजा से बची रहीं, लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ये महिलायें कहाँ अदृष्य हो गयीं? वे पारिवारिक उत्तरदायित्व निभाने के लिये वापस घरों में चली गयीं, उनका कामकाज व कार्य व्यवहार घर की चारदीवारी तक ही सीमित हो गया।4 वे किसी पर आश्रित क्यों रहें इसलिए यह सोचा जाने लगा कि स्त्रियों को सत्ता में हिस्सा मिलना चाहिए, परिणामतः पंचायत से संसद तक आरक्षण की माँग की जाने लगी।

भारतीय महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व हेतु चलाये गये अभियान को दो चरणों में बाँटा जा सकता है :– प्रथम चरण (1917–28), जिसमें महिलाओं को मताधिकार दिलाना तथा उन्हें विधायिकाओं तक पहुँचाना प्रमुख मुद्दे थे। द्वितीय चरण (1928–37) में मताधिकार को और उदार बनाना तथा विधायिकाओं में महिलाओं के प्रतिनिधित्व में वृद्धि प्रमुख विषय थे। मताधिकार प्राप्त करने वाले प्रतिनिधि मंडल में एनीबेसेंट, डॉ0 जोषी (रानी राजदेव), बेगम हसरत मोहानी एवं मार्गगेट तथा सरोजनी नायडू इसकी प्रमुख प्रतिनिधि थीं। इस महिला उत्थानवादी गुट ने प्रथम गोलमेज सम्मेलन (1930) में भी भाग लिया, जिसका भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने बहिष्कार किया था। एक और प्रतिनिधि मंडल जिसकी अगुवाई मंडी की रानी श्रीमती अहमद तथा श्रीमती चिदाम्बर ने की थी, ने स्त्री मताधिकार हेतु पुरूषों के समान योग्यता की नहीं वरन् पत्नीत्व की विषेषताओं के आधार पर मताधिकार की माँग की गयी। ब्रिटिश सरकार ने सरकारी पक्ष से सहानुभूति रखने वाली दो उत्थानवादी महिलाओं राधाबाई सुबारोयान तथा बेगम शाहनवाज प्रसिद्ध मुस्लिम महिला समाजसेवी की नियुक्ति की, जिन्होंने पत्नीत्व विशेषता के आधार पर आरक्षण का समर्थन किया, किन्तु बाद में बूमेन इंडियन एसोसिएषन (डब्ल्यूआईए) पर महिला आंदोलन के तौर–तरीकों को लेकर दरार पड़ गयी।

1931 में कांग्रेस के मूल अधिकारों के संकल्पन में स्त्री–पुरूष समानता को स्वीकार कर लेने के बाद डब्ल्यूआईए, एआईडब्ल्यूसी तथा एनसीडब्ल्यूआई संगठनों की राष्ट्रवादी नेताओं ने सरोजिनी नायडू के नेतृत्व में सम्मेलन किया तथा एक संयुक्त आषय पत्र की रूपरेखा बनायी जिसमें मतदान, चुनाव लड़ने, सार्वजनिक कार्यालय या रोजगार में लैंगिक आधार पर भेदभाव न करने, वयस्क मताधिकार तथा विधान मंडलों में महिला प्रतिनिधित्व सुनिष्चित करने हेतु विशिष्ट उपायों की अस्वीकृति आदि मुद्दों को शामिल किया गया। समानाधिकारवादी गुट ने द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में अल्पसंख्यक समिति को यह आशय पत्र दिया। इस सत्र में तीन महिला प्रतिनिधि उपस्थित थीं–राधाबाई सुब्बारोयान, बेगम शाहनवाज एवं सरोजिनी नायडू। इनमें से सरोजिनी नायडू तथा बेगम शाहनवाज ने अपनी स्थिति बदल ली तथा समानाधिकारवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया, जबकि सुब्बारोयान का मत था कि समान आधारों पर पुरूषों से प्रतिस्पर्धा कर महिलायें चुनी नहीं जा सकेंगी। इसलिए उन्होंने प्रथम तीन विधानसभाओं में 5 प्रतिषत सीटें आरक्षित करने का सुझाव दिया। 1935 में भारत शासन अधिनियम पारित किया गया जिसमें महिलाओं हेतु 41 स्थान आरक्षित किये गये।6 इस प्रकार राजनीतिक प्रतिनिधित्व हेतु महिलाओं के द्वितीय चरण को मिश्रित सफलता मिली।

इसके अलावा कई घटनाओं ने महिलाओं के आत्मसम्मान में वृद्धि की। 1909 में महिलाओं के हितों की रक्षार्थ प्रयाग महिला समिति का गठन किया। वर्ष 1928 में सरोजिनी नायडू भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्ष चुनी गयी। केतकी भट्ट ने 1927–28 में भारत आये साइमन कमीषन का विरोध किया तथा 1930 के नमक सत्याग्रह में भाग लिया। एनी बेसेंट, विजयलक्ष्मी पंडित, सुचेता कृपलानी और अन्य कई ने अपने तरीके से महिला अधिकारों के लिये योगदान दिया। महिलाओं के भारतीय संघ (डब्ल्यूआईए) 1917, भारतीय महिलाओं की राष्ट्रीय परिवाद (एनसीडब्ल्यूआई) 1926 और अखिल भारतीय महिला सम्मेलन (एआईडब्ल्यूसी) 1927 जैसे संगठन महिला उत्पीड़न के खिलाफ आवाज के रूप में शुरू हुए और एक मजबूत राष्ट्रवादी भावना विकसित की, हालाँकि वे कुलीन आधारित बने रहे।

स्वतन्त्रता के पश्चात पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका

स्वतन्त्रता के पश्चात प्रत्येक आँख में आँसू पोंछने का जो सपना राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने देखा था उसे व्यावहारिक स्वरूप देने हेतु 26 जनवरी, 1950 को लागू भारतीय संविधान के भाग–4 के नीति निदेशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 40 में राज्य को निर्देष दिया गया कि वह गाँवों में पंचायतों की स्थापना करने तथा उन्हें ऐसी शक्तियाँ देने के लिए उचित कदम उठाये, जो स्थानीय स्वशासन के लिए आवष्यक हो। इसके अलावा संविधान में महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार भी प्रदान किये गये हैं। संविधान के अनुच्छेद 15(1) के अनुसार राज्य नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, जन्मस्थान या इनमें से किसी एक आधार पर कोई भी विभेद नहीं करेगा। इसी अनुच्छेद के भाग–3 में राज्य को महिलाओं के सम्बन्ध में विशेष अधिकार प्रदान किया गया है, जिसके अनुसार महिलाओं और बालकों के लिए राज्यों को विशेष उपबन्ध करने से निवारित नहीं किया जा सकेगा। संविधान के भाग–4 में वर्णित नीति निदेशक सिद्धान्त भी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से राज्य को महिलाओं की स्थिति सुधारने को प्रेरित करते हैं। इसमें अनुच्छेद 38, 39(2), (3), (6), 41, 43 तथा 47 सम्मिलित किये जा सकते हैं।

भारतीय महिलाओं को नागरिक के रूप में संवैधानिक आधार पर सभी अवसर पहले से ही प्राप्त रहे हैं, किन्तु राजनैतिक निर्णयकारिता में महिलाओं की भागीदारी, स्वतन्त्रता के बाद के कई दशकों तक सुनिश्चित नहीं हो पायी। किन्तु यह अनुभव किया गया कि यदि महिलाओं की निर्णयकारिता के स्तर पर पहुँचना सुलभ कर दिया जाय तो महिलाओं की समस्याओं को सुलझाने में सरलता होगी। आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय आदि के कार्यक्रमों को संपादित एवं संचालित करने में भी, महिलाओं की रचनात्मकता तथा उनकी क्षमता का सही सदुपयोग हो सकेगा। अतः यह आवश्यक होता जा रहा था कि निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाकर शेष आधी दुनिया के भी साथ न्याय किया जाय।

19वीं शताब्दी में महिलाओं की दषा को सुधारने के लिए जहाँ धार्मिक और सामाजिक सुधारकों ने अनेक प्रयत्न किए वहीं नवीन मध्यम बुद्धिजीवी वर्ग की भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका रही। सरकार ने भी अनेकों कानून बनाकर इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया। साथ ही महिलाओं को भारतीय समाज में और सशक्त बनाने के उद्देश्य से भारत के संविधान में स्त्री–पुरूष समानता कानून (अनुच्छेद–14) बनाया गया। इसके बाद अनेक अधिनियम जैसे 1955 का हिन्दू दत्तक ग्रहण अधिनियम तथा 1956 में उत्तराधिकार अधिनियम के द्वारा संपत्ति में अधिकार प्रदान किया। समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 के द्वारा

आर्थिक अधिकारों के साथ–साथ सम्मान एवं सुरक्षा प्रदान की गई। इसी के साथ 1992 में 'राष्ट्रीय महिला आयोग' तथा मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अन्तर्गत महिला बाल विकास का गठन किया गया तथा 2001 में राष्ट्रीय महिला नीति बनाई गई जिसमें महिलाओं और उनके कल्याण से संबंधित अनेक योजनाएँ एवं कार्यक्रम बनाए गए।

भारत में पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी के मुद्दे ने जनवरी, 1957 में गठित बलवंत राय मेहता समिति के माध्यम से थोड़ी बहुत रफ्तार पकड़ी, जब समिति ने 1959 में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण नाम से अपनी रिपोर्ट सौंपी, तथा इसी कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर राजस्थान के नागौर जनपद स्थित बगदरी गाँव से पंचायती राज संस्था की शुरूवात हुई। बाद में इस संस्था को आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र तथा गुजरात सरीखे भारत के कई महत्वपूर्ण राज्यों में लागू किया गया। इस कमेटी ने देश के उत्थान में महिलाओं की भूमिका को महत्वपूर्ण बताते हुए यह विचार व्यक्त किया कि जब तक देश की महिलाओं को विकास प्रक्रिया में भागीदारी नहीं बनाया जायेगा तब तक देश की कोई वास्तविक प्रगति नहीं हो सकेगी। यहाँ पर प्रश्न केवल महिलाओं की स्थिति सुधारने की नहीं है, बल्कि इस आधी आबादी को किस प्रकार इस स्थिति में लाया जाय जिससे महिला न सिर्फ आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ी हो सके, बल्कि वह अपना निर्णय लेने में स्वयं सक्षम और स्वतन्त्र हो सके। इस समस्या पर विचार करते हुए बलवंत राय मेहता कमेटी ने अपनी अनुशंसा में प्रत्येक पंचायत समिति में महिला प्रतिनिधित्व के अनुभव में दो महिलाओं को नामांकित करने का प्रावधान रखा गया था। 1974 (छठीं पंचवर्षीय योजना) में पहली बार बृहद् स्तर पर महिलाओं के विकास पर अलग से सोचा गया तथा महिलाओं की स्थिति पर आयोग की रिपोर्ट ने महिला पंचायतों के गठन करने का सुझाव दिया। इसी तरह 1977 में जनता पार्टी सरकार द्वारा गठित अशोक मेहता कमेटी ने भी 1978 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में मजबूत निर्णय लेने की शक्तियों के साथ ही महिलाओं और अनुसूचित जातियों और जन जातियों की तरह के अन्य वंचित समूहों को शामिल कर एक और अधिक मौलिक विकेन्द्रीकृत संरचना बनाने की सिफारिष की।

इस बीच महिला शोषण के विरूद्ध भी कई कानून बने जिनमें दहेज, अन्य अत्याचार एवं उनके उत्तराधिकार से सम्बन्धित कानून निर्मित किये गये। किन्तु पंचायतों में महिला अधिकारिता हेतु मई, 1989 में तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने एक नया संविधान संषोधन (64वाँ) विधेयक संसद में पेश किया। यह विधेयक पंचायती राज विधेयक के रूप में जाना गया। इसमें पंचायतों के जरिये पहली बार एक तिहाई आरक्षण महिलाओं को देने की बात की गयी। प्रधानमंत्री राजीव गाँधी का मानना था कि यह आरक्षण विधेयक जनता की शक्ति है, यदि विकास की राह पर आगे बढ़ना है तो देश की सभी शक्ति को मिलाना जरूरी है। महिलायें देश की आधी शक्ति है यदि हम उन्हें साथ नहीं लेते हैं तो हमारी आधी ताकत कम हो जायेगी। परन्तु जिस प्रकार और जिन परिस्थितियों में यह विधेयक लाया गया और इसमें सम्मिलित कुछ प्रयोजनों के कारण सामान्यतः राज्यों को यह संदेह हुआ कि संविधान के इस संशोधन का वास्तविक लक्ष्य केन्द्र सरकार द्वारा गाँवों के लोगों से सीधा सम्पर्क स्थापित करना था। इस संदेह के कारण अधिकतर विरोधी दल 64 वें संवैधानिक संषोधन के प्रस्तुत स्वरूप से संतुष्ट नहीं थे। परिणामतः कांग्रेस पार्टी के व्यापक बहुमत के कारण यह विधेयक लोकसभा में तो पारित हो गया, परन्तु आवष्यक बहुमत के अभाव में यह राज्यसभा में पारित नहीं हो सका।

राज्यों में संदेह तथा विरोधी दलों के विरोध के कारण 64वाँ संवैधानिक संशोधन पारित तो नहीं हो सका किन्तु इस समय तक पंचायती राज के पुर्नजीवन की आवष्यकता तथा इसको महत्वपूर्ण बनाने की आकांक्षायें भारतीय जनमानस में आम चर्चा का विषय बन चुकी थी। इस तरह स्वतन्त्रता के पष्चात यदि पंचायती राज व्यवस्था को दो चरणों में बाँटा जाय तो हम महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता को सरलता से समझ सकते हैं। प्रथम चरण 1959–1993 तक एवं द्वितीय चरण 1993 के पष्चात्। प्रथम चरण में जहाँ स्त्रियों का प्रतिशत नगण्य रहा, वहीं द्वितीय चरण में 73वें एवं 74वें संविधान संषोधन के रूप में, भारतीय राजनीति में महिलाओं को जमीनी स्तर पर आरक्षण की व्यवस्था कर उनके सपनों को यथार्थ में परिवर्तित रखने का सफल प्रयास हुआ। इस संशोधन द्वारा पहली बार पंचायतों को इस बात के लिए अधिकृत किया गया कि वे स्वयं विकास कार्यों का संपादन करें। किन्तु इस संवैधानिक संषोधन की शुरूवात 1991 में तत्कालीन पी0वी0 नरसिंह राव की कांग्रेस सरकार द्वारा पंचायतों के लिए एक सर्वमान्य कानून बनाने की आवष्यकता के साथ शुरूवात की गयी। अतः अनेक राजनीतिक दलों से विचार–विमर्श करके एक नया संविधान संशोधन विधेयक 16 सितम्बर, 1991 को लोक सभा में प्रस्तुत किया गया। सदन ने गहन विचार–विमर्श के लिए इस विधेयक को संसद के 30 सदस्यीय संयुक्त समिति को शौंप दिया। जिसमें लोकसभा के 20 तथा राज्यसभा के 10 सदस्य थे तथा इस संयुक्त समिति के अध्यक्ष नाथूराम मिर्धा थे। संसद के दोनों सदनों तथा विभिन्न दलों के सदस्यों से गठित इस संयुक्त समिति के विचार तथा सुझावों के पश्चात् 22 दिसम्बर, 1992 को लोकसभा द्वारा और 23 सितम्बर, को राज्यसभा द्वारा स्वीकृत प्रदान की गयी। तत्पष्चात् आधे से अधिक राज्यों के विधान मंडलों ने इस विधेयक को अपनी स्वीकृत प्रदान की जिसमें 73 वें संविधान संशोधन को वैधानिक स्वरूप प्राप्त हुआ तथा शीघ्र ही इस विधेयक पर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर होने के पष्चात 24 अप्रैल, 1993 को अधिसूचना जारी कर देश में संवैधानिक स्वरूप से स्थापित नई पंचायती राज व्यवस्था लागू हो गयी। संविधान में किये गये इस संषोधन ने समाज की प्रवाहयान धारा को एक नवीन और क्रांतिकारी दशा दी जिससे ग्राम सभा की 'ग्राम संसद' के रूप में परिकल्पना ने ग्रामीण अंचलों का स्वरूप परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

निष्कर्ष

अंत में ये कहना सही होगा कि महिलाओं तथा दूसरे पिछड़े और हाशिए पर खड़े समाज के सशक्तीकरण जैसी उपलब्धियों के बावजूद विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया काफी धीमी, सुस्त और असंतोषजनक है। इन संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिया जाना जहाँ एक ओर इस विविधताओं वाले इस देश में बरसों से हाशिए पर पड़े समाज को मुख्यधारा में समावेशित किए जाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था वहीं अब इस सिलसिले में केन्द्र और राज्य के राजनीतिक हुक्मरानों की ओर से एक परिवर्तनकारी और ठोस कदम उठाये जाने की जरूरत है। उम्मीद की जा सकती है कि आने वाले वक्त में पंचायतें देश के 'लघु गणतंत्र' के रूप में उभरकर सामने आयेंगी।

संदर्भ

1. कश्यप, सुभाष, ''भारत का सांविधानिक विकास और भारत का संविधान'' हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 1997, पृष्ठ–229
2. सुनील गोयल, ''भारतीय समाज में नारी'', आर.बी.एम.ए. पब्लिकेशन, जयपुर, 2003, पेज 26–31
3. वृंदा करात, ''भारतीय नारी : संघर्ष और मुक्ति'', नाईस प्रिंटिंग प्रेस, नई दिल्ली, 2008, पेज 81–91
4. राधा कुमार, ''स्त्री संघर्ष का इतिहास'' (1800–1900), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पेज 136–151.

5. ललित कुमावत, ''पंचायती राज एवं वंचित महिला समूह का उभरता नेतृत्व'', क्लासिकल पब्लिशिंग, नई दिल्ली, 2004, पेज 102–121
6. हरिजन, जनवरी 18, 1988
7. फनवजमक पद म्सचीपदेजवदमश्े भ्पेजवतल व ि प्दकपंए स्वदकवदए श्रवीद डनततंलए 1905ए चंहम. 68
8. अवस्थी, अमेरश्वर व अवस्थी, आनंद प्रकाश, ''भारतीय प्रशासन'' लक्ष्मी नारायन अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 1999–2000, पृष्ठ–496
9. शर्मा, बी.एन., शर्मा, ब्रजभूषण एवं भद्र, आशीष, ''जिला सरकार : अवधारणा, स्वरूप एवं संभावनाएं'', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2000, पृष्ठ–121
10. कोठारी, रजनी ''भारत में राजनीति'' ऑरियन्ट लॉगमैन लि0, नई दिल्ली, 1990, पृष्ठ–95–96
11. नारंग, ए.एस. ''भारतीय शासन एवं राजनीति,'' गीतांजलि पब्लिकेशन्स हाउस, नई दिल्ली, 2004, पृष्ठ–198
12. उपर्युक्त, पृष्ठ–201
13. नेहरू, पं0 जवाहर लाल, ''सामुदायिक विकास और पंचायती राज'', सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1965, पृष्ठ–104